अध्याय 6

नागरिकता

परिचय

हमने अपनी बात नागरिकता की सुप्रसिद्ध परिभाषा से शुरू करें कि नागरिकता एक राजनीतिक समुदाय की पूर्ण और समान सदस्यता है। इस अध्याय में हम यह छानबीन करेंगे कि आज नागरिकता का सही–सही अर्थ क्या है? इसके बाद हम उन बहसों और संघर्षों पर दृष्टिपात करेंगे, जो 'पूर्ण और समान सदस्यता' की व्याख्या के संदर्भ चल रहे हैं। अगले परिच्छेद में नागरिक और राष्ट्र के बीच संबंध तथा विभिन्न देशों में स्वीकृत नागरिकता की कसौटी पर चर्चा होगी। नागरिकता के लोकतांत्रिक सिद्धांतों का निहितार्थ है कि नागरिकता सार्वभौम होनी चाहिए। क्या इसका यह अर्थ है कि प्रत्येक व्यक्ति को किसी न किसी राष्ट्र का सदस्य मान लेना चाहिए? ऐसी हालत में हम तमाम राष्ट्रविहीन लोगों के अस्तित्व की व्याख्या कैसे करेंगे? इस मुद्दे पर बाद के परिच्छेद में विचार किया जाएगा। आखिरी परिच्छेद में वैश्विक नागरिकता के मुद्दे पर विचार होगा कि क्या इसका अस्तित्व है और क्या यह राष्ट्रीय नागरिकता की जगह ले सकती है?

इस अध्याय को पढ़ने के बाद

- नागरिकता के अर्थ की व्याख्या करने और
- आज जिन क्षेत्रों में इस अर्थ को विस्तार दिया जा रहा है या चुनौती दी जा रही है, उनमें से कुछ पर विचार करने में समर्थ होंगे ।

नागरिकता

6.1 भूमिका

नागरिकता की परिभाषा किसी राजनीतिक समुदाय की पूर्ण और समान सदस्यता के रूप में की गई है। समकालीन विश्व में राष्ट्रों ने अपने सदस्यों को एक सामूहिक राजनीतिक पहचान के साथ-साथ कुछ अधिकार भी प्रदान किए हैं। इसलिए हम संबद्ध राष्ट्र के आधार पर अपने को भारतीय, जापानी या जर्मन मानते हैं। नागरिक अपने राष्ट्र से कुछ बुनियादी अधिकारों के अलावा कहीं भी यात्रा करने में सहयोग और सुरक्षा की अपेक्षा रखते हैं।

किसी राष्ट्र के संपूर्ण सदस्य होने का महत्त्व तब ठीक-ठीक समझ में आ सकता है, जब हम दुनिया भर में उन हज़ारों लोगों की स्थिति के बारे में सोचते हैं, जो दुर्भाग्यवश शरणार्थी और अवैध प्रवासियों के रूप में रहने के लिए मज़बूर हैं, क्योंकि उन्हें कोई राष्ट्र अपनी सदस्यता देने के लिए तैयार नहीं है। ऐसे लोगों को कोई राष्ट्र अधिकारों की गारंटी नहीं देता और वे आम तौर पर असुरक्षित हालत में जीवनयापन करते हैं। मनपसंद राष्ट्र की पूर्ण सदस्यता उनके लिए ऐसा लक्ष्य है जिसके लिए वे संघर्ष करने को तैयार हैं, जैसा कि आज हम मध्यपूर्व के फिलिस्तीनी शरणार्थियों के मामले में देखते हैं।

नागरिकों को प्रदत्त अधिकारों की सुस्पष्ट प्रकृति विभिन्न राष्ट्रों में भिन्न-भिन्न हो सकती है, लेकिन अधिकतर लोकतांत्रिक देशों ने आज उनमें कुछ राजनीतिक अधिकार शामिल किये हैं। उदाहरणस्वरूप, मतदान, अभिव्यक्ति या आस्था की आज़ादी जैसे नागरिक अधिकार और न्यूनतम मजदूरी या शिक्षा पाने से जुड़े कुछ सामाजिक-आर्थिक अधिकार। अधिकारों और प्रतिष्ठा की समानता नागरिकता के बुनियादी अधिकारों में से एक है।

नागरिक आज जिन अधिकारों का प्रयोग करते हैं उन सभी को संघर्ष के बाद हासिल किया गया है। जनता ने अपनी स्वतंत्रता और अधिकारों को मुखर करने के लिए कुछ

नागरिकता

प्रारंभिक संघर्ष शक्तिशाली राजतंत्रों के खिलाफ छेड़े थे। अनेक यूरोपीय देशों में ऐसे संघर्ष हुए। उनमें से कुछ हिंसक संघर्ष थे, जैसे 1789 की फ्रांसीसी क्रांति। एशिया और अफ्रीका के अनेक उपनिवेशों में समान नागरिकता की माँग औपनिवेशिक शासकों से स्वतंत्रता हासिल करने के संघर्ष का हिस्सा रही। दक्षिण अफ्रीका में समान नागरिकता पाने के लिए अफ्रीका की अश्वेत आबादी को सत्तारूढ़ गोरे अल्पसंख्यकों के खिलाफ लंबा संघर्ष करना पड़ा। यह संघर्ष 1990 के दशक के आरंभ तक ज़ारी रहा। पूर्ण सदस्यता और समान अधिकार पाने का संघर्ष विश्व के कई हिस्सों में आज भी ज़ारी है। आपने देश में महिला आंदोलन और दलित आंदोलन के बारे में पढ़ा होगा। उनका मकसद है अपनी ज़रूरतों की ओर ध्यान आकृष्ट कर जनमत बदलना, साथ ही समान अधिकार और अवसर सुनिश्चित करने के लिए सरकारी नीतियों को प्रभावित करना।

नागरिकता सिर्फ़ राज्यसत्ता और उसके सदस्यों के बीच के संबंधों का निरूपण नहीं, बल्कि उससे अधिक है। यह नागरिकों के आपसी संबंधों के बारे में भी है। इसमें नागरिकों के एक-दूसरे के प्रति और समाज के प्रति निश्चित दायित्व शामिल हैं। इनमें सिर्फ़ राष्ट्र द्वारा थोपी गई कानूनी बाध्यताएँ नहीं, बल्कि समुदाय के सहजीवन में

चिंतन-मंथन

सत्रहवीं से बीसवीं सदी के बीच यूरोप के गोरे लोगों ने दक्षिण अफ्रीका के लोगों पर अपना शासन कायम रखा। 1994 तक दक्षिण अफ्रीका में अपनाई गई नीतियों के बारे में नीचे दिए गए ब्यौरे को पढ़िए।

श्वेत लोगों को मत देने, चुनाव लड़ने और सरकार को चुनने का अधिकार था। वे संपत्ति खरीदने और देश में कहीं भी आने-जाने के लिए स्वतंत्र थे। काले लोगों को ऐसे अधिकार नहीं थे। काले और गोरे लोगों के लिए पृथक मुहल्ले और कालोनियाँ बसाई गई थीं। काले लोगों को अपने पड़ोस की गोरे लोगों की बस्ती में काम करने के लिए 'पास' लेने पड़ते थे। उन्हें गोरों के इलाके में अपने परिवार रखने की अनुमति नहीं थी। अलग-अलग रंग के लोगों के लिए विद्यालय भी अलग-अलग थे।

- ☐ क्या अश्वेत लोगों को दक्षिण अफ्रीका में पूर्ण और समान सदस्यता मिली हुई थी? कारण सहित बताइये।
- ☐ ऊपर दिया गया ब्यौरा हमें दक्षिण अफ्रीका में भिन्न समूहों के अंतर्संबंधों के बारे में क्या बताता है?

आओ कुछ करके सीखे

अपने क्षेत्र के नागरिकों की गतिविधियों के कुछ वैसे उदाहरणों के बारे में सोचें जो दूसरे की मदद करने अथवा क्षेत्र की उन्नति या फिर पर्यावरण की रक्षा से संबंधित हों। ऐसी कुछ गतिविधियों की एक सूची बनाएँ जो आपके हमउम्र युवाओं द्वारा अपनाई जा सकती हैं।

भागीदार होने और योगदान करने का नैतिक दायित्व भी शामिल होता है। नागरिकों को देश के सांस्कृतिक और प्राकृतिक संसाधनों का उत्तराधिकारी और न्यासी भी माना जाता है।

किसी राजनीतिक अवधारणा को समझने का अच्छा तरीका उन उदाहरणों की पड़ताल करना है, जिनमें जाने-माने अर्थों पर ऐसे समूहों द्वारा सवालिया निशान लगाया जा रहा है, जो महसूस करते हैं कि उनमें उनकी ज़रूरतों और आकांक्षाओं का खयाल नहीं किया गया।

6.2 संपूर्ण और समान सदस्यता

अगर आपने कभी भीड़ भरे रेल के डिब्बे या बस में सफर किया है तो आप इस चलन से अवगत होंगे कि वे लोग, जो प्रवेश पाने के लिए पहले शायद एक-दूसरे से लड़ पड़े थे, अंदर पहुँचते ही दूसरों को बाहर रखने के साझे स्वार्थ में शामिल हो जाते हैं। जल्दी ही 'भीतरी' और 'बाहरी' का विभाजन उभर आता है और 'बाहरी' को खतरे के रूप में देखा जाने लगता है।

इसी तरह की प्रक्रियाएँ समय-समय पर नगरों, प्रदेशों या कभी-कभार तो पूरे राष्ट्र में चलती हैं। अगर आजीविका, चिकित्सा या शिक्षा जैसी सुविधाएँ और जल-जमीन जैसे प्राकृतिक संसाधन सीमित हों, तब 'बाहरी' लोगों के प्रवेश को रोकने की माँग उठने की संभावना रहती है, भले ही वे सहनागरिक क्यों न हों। आपको 'मुंबई मुंबईकर (मुंबई वाले) के लिए' का नारा शायद याद हो, जिससे ऐसी भावनाएँ प्रकट हुईं। भारत और विश्व के विभिन्न हिस्सों में इस तरह के अनेक संघर्ष होते आये हैं।

इससे यह प्रश्न उठता है कि आखिर 'संपूर्ण और समान सदस्यता' का असली अर्थ क्या है? क्या इसका अर्थ यह होता है कि नागरिकों को देश में जहाँ भी चाहें रहने, पढ़ने या काम करने का समान अधिकार और अवसर मिलना चाहिए? क्या इसका अर्थ यह है कि सभी अमीर-गरीब नागरिकों को कुछ बुनियादी अधिकार और सुविधाएँ मिलनी चाहिए?

इस परिच्छेद में हम पहले इन प्रश्नों के आधार पर नागरिकता का अर्थ खोजेंगे।

अपने देश और अन्य अनेक देशों में नागरिकों को प्रदत्त अधिकारों में एक है गमनागमन की स्वतंत्रता। यह अधिकार कामगारों के लिए विशेष महत्त्व का है। गृहक्षेत्र में अवसर

उपलब्ध नहीं होने पर कामगार रोजगार की तलाश में आप्रवास की ओर प्रवृत्त होते हैं। रोजगार की तलाश में कुछ लोग देश के बाहर भी जाते हैं। हमारे देश के विभिन्न हिस्से में कुशल और अकुशल मज़दूरों के लिए बाज़ार विकसित हुए हैं। उदाहरण के लिए, सूचना तकनीक के अधिकतर कर्मी बंगलोर जैसे शहरों की ओर उमड़ते हैं। केरल की नर्सें पूरे देश में कहीं भी मिल सकती हैं। शहरों में तेज़ी से पनपता भवन-निर्माण उद्योग देश के विभिन्न हिस्सों के श्रमिकों को आकर्षित करता है। सड़क आदि आधारभूत संरचनाओं की परियोजनाओं में भी यही होता है। आपने अपने घर या स्कूल के आसपास विभिन्न क्षेत्र के मज़दूरों को देखा भी होगा।

हालाँकि, अधिक संख्या में रोजगार बाहर के लोगों के हाथ में जाने के खिलाफ अक्सर स्थानीय लोगों में प्रतिरोध की भावना पैदा हो जाती है। कुछ नौकरियों या कामों को राज्य के मूल निवासियों या स्थानीय भाषा को जानने वाले लोगों तक सीमित रखने की माँग उठती है। राजनीतिक पार्टियाँ यह मुद्दा उठाती हैं। यह प्रतिरोध 'बाहरी' के खिलाफ संगठित हिंसा का भी रूप ले लेता है। भारत के लगभग सभी क्षेत्र इस तरह के आंदोलनों से गुजर चुके हैं। क्या ऐसे आंदोलन हमेशा न्यायसंगत होते हैं?

नागरिकता

मार्टिन लूथर किंग

1950 का दशक संयुक्त राज्य अमेरिका के अनेक दक्षिणी राज्यों में काली और गोरी आबादी के बीच बरकरार विषमताओं के खिलाफ नागरिक अधिकार आंदोलन के उभार का साक्षी है। इस तरह की विषमताएँ इन राज्यों द्वारा पृथक्करण कानून के नाम से चर्चित ऐसे कानूनों के ज़रिए पोषित होती थीं, जिनसे काले लोगों को अनेक नागरिक और राजनीतिक अधिकारों से वंचित किया जाता था। उन कानूनों ने विभिन्न नागरिक सुविधाओं, जैसे रेल, बस, रंगशाला, आवास, होटल, रेस्टुरेंट आदि में गोरे और काले लोगों के लिए अलग-अलग स्थान निर्धारित कर रखे थे। इन कानूनों के कारण काले और गोरे बच्चों के स्कूल भी अलग-अलग थे।

इन कानूनों के खिलाफ हुए आंदोलन में मार्टिन लूथर किंग जूनियर अग्रणी काले नेता थे। उन्होंने इनके खिलाफ अनेक अकाट्य तर्क दिए। पहला, आत्म-गौरव व आत्म-सम्मान के मामले में विश्व की हर जाति या वर्ण का मनुष्य बराबर है। दूसरा, किंग ने कहा कि पृथक्करण राजनीति के चेहरे पर 'सामाजिक कोढ़' की तरह है क्योंकि यह उन लोगों को गहरे मनोवैज्ञानिक ज़ख्म देता है, जो ऐसे कानूनों के शिकार हैं।

किंग ने दलील दी कि पृथक्करण की प्रथा गोरे समुदाय के जीवन की गुणवत्ता भी कम करती है। वे इसे उदाहरणों से स्पष्ट करते हैं। गोरे समुदाय ने अदालत के निर्देशानुसार कुछ सामुदायिक उद्यानों में काले लोगों को प्रवेश की इज़ाजत देने के बजाय उन्हें बंद करने का फ़ैसला किया। इसी तरह कुछ बेसबॉल टीमें टूट गईं क्योंकि अधिकारी काले खिलाड़ियों को स्वीकार करना नहीं चाहते थे। तीसरी, पृथक्करण कानून लोगों के बीच कृत्रिम सीमाएँ खींचते हैं और उन्हें देश के व्यापक हित के लिए एक-दूसरे का सहयोग करने से रोकते हैं। इन कारणों से किंग ने बहस छेड़ी कि उन कानूनों को खत्म कर दिया जाना चाहिए। उन्होंने पृथक्करण कानूनों के खिलाफ शांतिपूर्ण और अहिंसक प्रतिरोध का आह्वान किया। उन्होंने अपने एक भाषण में कहा — ''हमें अपने रचनात्मक प्रतिरोध को कभी भी शारीरिक हिंसा में ढालकर पतन का शिकार नहीं होने देना चाहिए।''

नागरिकता

किसी अन्य देश में स्थानीय लोगों द्वारा भारतीय कामगारों के साथ दुर्व्यवहार किए जाने पर हम सब गुस्से से भर उठते हैं। संभव है, हममें से कुछ यह भी मानें कि कुशल और शिक्षित कामगारों को काम के लिए कहीं भी आने-जाने का अधिकार है। राज्य भी इस तरह के कामगारों को आकर्षित करने की अपनी योग्यता पर गर्व कर सकता है। लेकिन अगर किसी क्षेत्र में काम अपर्याप्त हों, तो संभव है, स्थानीय लोग 'बाहरी लोगों' की प्रतिद्वंद्विता से नाराज हों। तो क्या गमनागमन की आज़ादी में देश के किसी भी हिस्से में काम करने या बसने का अधिकार शामिल है?

एक अन्य बात पर हमें विचार करने की ज़रूरत है और वह, यह कि गरीब प्रवासी और कुशल प्रवासी को लेकर कभी-कभी हमारी प्रतिक्रिया में अंतर होता है। हम अपने इलाकों में आने-जाने वाले गरीब प्रवासियों को हमेशा उस तरह स्वागत योग्य नहीं मानते, जिस तरह कुशल और दौलतमंद कामगारों को मानते हैं। इससे प्रश्न उठता है कि क्या गरीब और अकुशल कामगारों को कुशल कामगारों की तरह देश में कहीं भी रहने और काम करने का समान अधिकार है? देश के सभी नागरिकों की 'पूर्ण और समान सदस्यता' से संबंधित ये कुछ ऐसे मुद्दे हैं, जिन पर आज हमारे देश में बहस चल रही है।

यूँ कभी-कभी लोकतांत्रिक समाजों में भी विवाद उठ सकते हैं। ऐसे विवादों का निदान कैसे हो? प्रतिवाद करने का अधिकार हमारे संविधान में नागरिकों के लिए सुनिश्चित की गई अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का एक पहलू है, बशर्ते वह प्रतिवाद दूसरे लोगों या राज्य के जीवन और संपत्ति को नुकसान नहीं पहुँचाये। नागरिक समूह बनाकर, प्रदर्शन कर, मीडिया का उपयोग कर, राजनीतिक दलों से अपील कर या अदालत में जाकर जनमत और सरकारी नीतियों को परखने और प्रभावित करने के लिए स्वतंत्र हैं। अदालतें उस पर निर्णय दे सकती हैं या समाधान के लिए सरकार से आग्रह कर सकती हैं। यह भले ही धीमी प्रक्रिया हो पर इससे कई बार न्यूनाधिक सफलताएँ संभव हैं। अगर सभी नागरिकों को पूर्ण और समान सदस्यता उपलब्ध कराने के दिशा-निर्देशक सिद्धांत का अनुपालन सुनिश्चित हो तो किसी समाज में समय-समय पर उत्पन्न होने वाली समस्याओं के लिए सर्वमान्य समाधान पर पहुँचना संभव होना चाहिए। लोकतंत्र का यह एक बुनियादी सिद्धांत है कि ऐसे विवादों का समाधान बल प्रयोग के बजाय संधि-वार्ता और विचार-विमर्श से हो। यह नागरिकता के प्रमुख दायित्वों में से एक है।

चिंतन-मंथन

नागरिकों के लिए देशभर में गमनागमन और रोजगार की स्वतंत्रता के पक्ष और विपक्ष के तर्कों की जाँच-पडताल करें। क्या किसी क्षेत्र में लंबे समय से रहने वाले निवासियों को रोजगार और सुविधाओं में प्राथमिकता मिलनी चाहिए?

क्या राज्यों को व्यावसायिक कॉलेजों में बाहरी छात्रों के प्रवेश के लिए कोटा निर्धारित करने की अनुमति दी जानी चाहिए?

नागरिकता

प्रवासी मज़दूरों के बिना भारत के शहरी मध्यवर्ग के जीवन का एक दिन

नागरिकता

6.3 समान अधिकार

इस भाग में हम नागरिकता के एक अन्य पहलू की तहकीकात करेंगे। क्या पूर्ण और समान नागरिकता का अर्थ यह है कि राजसत्ता द्वारा सभी नागरिकों को, चाहे वे अमीर या गरीब हों कुछ बुनियादी अधिकारों और न्यूनतम जीवन स्तर की गारंटी दी जानी चाहिए? इस मुद्दे पर विचार करने के लिए हम खास वर्ग के लोगों पर नज़र डालेंगे, यानी शहरी गरीबों पर। शहरी गरीबों से सबंधित समस्या उन अत्यावश्यक समस्याओं में से एक है, जो सरकार के सामने मुँह बाये खड़ी हैं।

भारत के हर शहर में बहुत बड़ी आबादी झोपड़पट्टियों और अवैध कब्जे की जमीन पर बसे लोगों की है। यद्यपि ये लोग अपरिहार्य और उपयोगी काम अक्सर कम मज़दूरी पर करते हैं फिर भी शहर की बाकी आबादी उन्हें अवांछनीय मेहमान की तरह देखती है। उन पर शहर के संसाधनों पर बोझ बनने या अपराध और बीमारी फैलाने का आरोप मढ़ा जाता है।

गंदी बस्तियों की स्थिति अक्सर वीभत्स होती हैं। छोटे-छोटे कमरों में कई-कई लोग ठुँसे रहते हैं। यहाँ न निजी शौचालय होता है, न जलापूर्ति और न सफाई। गंदी बस्तियों में जीवन और संपत्ति असुरक्षित होते हैं। झोपड़पट्टियों के निवासी अपने श्रम से अर्थव्यवस्था में महत्त्वपूर्ण योगदान करते हैं। अन्य पेशों के बीच ये फेरीवाले, छोटे व्यापारी, सफाईकर्मी या घरेलू नौकर, नल ठीक करने वाले या मिस्त्री होते हैं। झोपड़पट्टियों में बेंत बुनाई या कपड़ा रंगाई-छपाई या सिलाई जैसे छोटे कारोबार भी चलते हैं। झोपड़पट्टियों के निवासियों को सफाई या जलापूर्ति जैसी सुविधाएँ मुहैया कराने पर संभवतः कोई भी शहर अपेक्षाकृत कम खर्च करता है।

शहरी गरीबों की हालत के प्रति सरकार, स्वयंसेवी संगठन और अन्य एजेंसियों सहित स्वयं झोपड़पट्टी के निवासियों में भी जागरूकता बढ़ रही है। मिसाल के तौर पर, जनवरी 2004 में फुटपाथी दुकानदारों के लिए एक राष्ट्रीय नीति तैयार की गयी। बड़े शहरों में लाखों फुटपाथी दुकानदार हैं और उनको अक्सर पुलिस और नगर प्रशासकों का उत्पीड़न झेलना पड़ता है। इस नीति का मकसद विक्रेताओं को मान्यता और नियमन प्रदान करना था ताकि उन्हें सरकारी नियमों के अनुपालन के दायरे में उत्पीड़न से मुक्त कारोबार चलाने की शक्ति हासिल हो।

झोपड़पट्टियाँ भी अपने अधिकारों के प्रति जागरूक और संगठित हो रही हैं। उन्होंने कभी-कभी अदालतों में भी दस्तक दी है। उनके लिए वोट देने जैसी बुनियादी राजनीतिक अधिकार का प्रयोग करना भी कठिन हो जाता है क्योंकि मतदाता सूची में दर्ज़ होने के लिए स्थायी पते की ज़रूरत होती है और अनधिकृत बस्तियों और पटरी पर रहने वाले के लिए ऐसा पता पेश करना कठिन होता है।

नागरिकता

हमारे समाज में हाशिए पर ठेले जा रहे अन्य इन्सानी समूहों में आदिवासी और वनवासी शामिल हैं। ये लोग अपने जीवनयापन के लिए जंगल और अन्य प्राकृतिक संसाधनों पर निर्भर हैं। बढ़ती आबादी और जमीन और संसाधनों की कमी के दबाव के कारण उनमें से अनेक की जीवन-पद्धति और आजीविका संकट में है। जंगल और तराई-क्षेत्र में मौजूद खनिज संसाधनों की खनन करने के इच्छुक उद्यमियों के हितों का दबाव आदिवासी और वनवासी लोगों की जीवन पद्धति और आजीविका पर एक अन्य खतरा है। पर्यटन उद्योग भी यही कर रहा है। सरकारें इस सवाल से जूझ रही हैं कि देश के विकास को खतरे में डाले बगैर इन लोगों और इनके रहवास की सुरक्षा कैसे करें? यह ऐसा मुद्दा है जो सिर्फ़ आदिवासी आबादी नहीं बल्कि सभी नागरिकों को प्रभावित करता है।

नागरिकता, समानता और अधिकार

नागरिकता महज एक कानूनी अवधारणा नहीं है। इसका समानता और अधिकारों के व्यापक उद्देश्यों से भी घनिष्ट संबंध है। इस संबंध का सर्वसम्मत सूत्रीकरण अंग्रेज समाजशास्त्री टी.एच.मार्शल (1893-1981) ने किया है। अपनी पुस्तक 'नागरिकता और सामाजिक वर्ग' (1950) में मार्शल ने नागरिकता को 'किसी समुदाय के पूर्ण सदस्यों को प्रदत्त प्रतिष्ठा' के रूप में परिभाषित किया है। इस प्रतिष्ठा को ग्रहण करने वाले सभी लोग प्रतिष्ठा में अंतर्भूत अधिकारों और कर्त्तव्यों के मामले में बराबर होते हैं।

नागरिकता की मार्शल द्वारा प्रदत्त कुंजी धारणा में मूल संकल्पना 'समानता' की है। इसमें दो बातें अंतर्निहित हैं। पहली कि प्रदत्त अधिकार और कर्त्तव्यों की गुणवत्ता बढ़े। दूसरी कि उन लोगों की संख्या बढ़े जिन्हें वे दिए गए हैं।

मार्शल नागरिकता में तीन प्रकार के अधिकारों को शमिल मानते हैं – नागरिक, राजनीतिक और सामाजिक अधिकार।

नागरिक अधिकार व्यक्ति के जीवन, आज़ादी और जायदाद की हिफ़ाजत करते हैं। राजनीतिक अधिकार व्यक्ति को शासन प्रक्रिया में सहभागी बनने की शक्ति प्रदान करते हैं। सामाजिक अधिकार व्यक्ति के लिए शिक्षा और रोजगार को सुलभ बनाते हैं। कुल मिलाकर ये अधिकार नागरिक के लिए इज्जत के साथ जीवन-बसर करना संभव बनाते हैं।

मार्शल ने सामाजिक वर्ग को 'असमानता की व्यवस्था' के रूप में चिन्हित किया। नागरिकता वर्ग पदानुक्रम के विभाजक परिणामों का प्रतिकार कर समानता सुनिश्चित करती है। इस प्रकार यह बेहतर सुबद्ध और समरस समाज रचना को सुसाध्य बनाता है।

सभी नागरिकों को समान अधिकार और अवसर देने पर विचार करना और सुनिश्चित करना किसी सरकार के लिए आसान मामला नहीं होता। विभिन्न समूह के लोगों की ज़रूरत और समस्याएँ अलग-अलग हो सकती हैं और एक समूह के अधिकार दूसरे समूह के अधिकारों के प्रतिकूल हो सकते हैं। नागरिकों के लिए समान अधिकार का मतलब यह नहीं होता कि सभी लोगों पर समान नीतियाँ लागू कर दी जाएँ, क्योंकि विभिन्न समूह के लोगों की ज़रूरतें भिन्न-भिन्न हो सकती हैं। अगर प्रयोजन सिर्फ़ ऐसी नीति बनाना नहीं

नागरिकता

नागरिकता, समानता और अधिकार

सर्वोच्च न्यायालय ने मुंबई की झोपड़पट्टियों में रहनेवालों के अधिकारों के बारे में समाजकर्मी ओल्गा टेलिस की जनहित याचिका (ओल्गा टेलिस बनाम बंबई नगर निगम) पर 1985 में एक महत्त्वपूर्ण फ़ैसला दिया। याचिका में कार्यस्थल के निकट रहने की वैकल्पिक जगह उपलब्ध नहीं होने के कारण फुटपाथ या झोपड़पट्टियों में रहने के अधिकार का दावा किया गया था। अगर यहाँ रहने वालों को हटने के लिए मज़बूर किया गया तो उन्हें आजीविका भी गँवानी पड़ेगी। सर्वोच्च न्यायालय ने कहा कि संविधान की धारा-21 में जीने के अधिकार की गारंटी दी गई है, जिसमें आजीविका का अधिकार शामिल है। इसलिए अगर फुटपाथवासियों को बेदखल करना हो, तो उन्हें आश्रय के अधिकार के तहत पहले वैकल्पिक जगह उपलब्ध करानी होगी।

है, जो सभी लोगों पर एक तरह से लागू हो बल्कि लोगों को अधिक बराबरी पर लाना है, तो नीतियाँ तैयार करते वक्त लोगों की विभिन्न ज़रूरतों और दावों का ध्यान रखना होगा।

इस विमर्श से यह स्पष्ट हो जाना चाहिए कि वैश्विक स्थिति, अर्थव्यवस्था और समाज में बदलाव नागरिकता के अर्थ और अधिकारों की नई व्याख्या की माँग करते हैं। नागरिकता से संबंधित औपचारिक कानून प्रस्थान बिंदु भर होते हैं और कानूनों की व्याख्या निरंतर विकसित होती है। हालाँकि कुछ ऐसी समस्याएँ उठ सकती हैं जिनका समाधान पाना आसान न हो, फिर भी समान नागरिकता की अवधारणा का अर्थ यही है कि सभी नागरिकों को समान अधिकार और सुरक्षा प्रदान करना सरकारी नीतियों का मार्गदर्शक सिद्धांत हो।

6.4 नागरिक और राष्ट्र

राष्ट्र राज्य की अवधारणा आधुनिक काल में विकसित हुई। राष्ट्र राज्य की संप्रभुता और नागरिकों के लोकतांत्रिक अधिकारों का दावा सर्वप्रथम 1789 में फ्रांस के क्रांतिकारियों ने किया था। राष्ट्र-राज्यों का दावा है कि उनकी सीमाएँ सिर्फ राज्यक्षेत्र को नहीं, बल्कि एक अनोखी संस्कृति और साझा इतिहास को भी परिभाषित करती हैं। राष्ट्रीय पहचान को एक झंडा, राष्ट्रगान, राष्ट्रभाषा या कुछ खास उत्सवों के आयोजन जैसे प्रतीकों से व्यक्त किया जा सकता है।

अधिकतर आधुनिक राज्य अपने में विभिन्न धर्मों, भाषा और सांस्कृतिक परंपराओं के लोगों को सम्मिलित करते हैं। लेकिन एक लोकतांत्रिक राज्य की राष्ट्रीय पहचान में नागरिकों को ऐसी राजनीतिक पहचान देने की कल्पना होती है, जिसमें राज्य के सभी सदस्य भागीदार हो सकें। लोकतांत्रिक देश आमतौर पर अपनी पहचान इस प्रकार परिभाषित करने का प्रयास करते हैं कि वह यथासंभव समावेशी हो यानी जो सभी नागरिकों को राष्ट्र के अंग के रूप में खुद को पहचानने की अनुमति देता हो। लेकिन व्यवहार में अधिकतर देश अपनी पहचान को इस तरह परिभाषित करने की ओर अग्रसर

हैं, जो कुछ नागरिकों के लिए राष्ट्र के साथ अपनी पहचान कायम करना अन्यों की तुलना में आसान बनाता है। यह राजसत्ता के लिए भी अन्यों की तुलना में कुछ लोगों को नागरिकता देना आसान कर देता है। यह आप्रवासियों का देश होने पर गौरवान्वित होने वाले संयुक्त राज्य अमेरिका के बारे में भी वैसे ही सच है जैसे कि किसी अन्य देश के बारे में।

उदाहरणस्वरूप, फ्रांस ऐसा देश है जो धर्मनिरपेक्ष और समावेशी होने का दावा करता है। वह यूरोपीय मूल के लोगों को ही नहीं, बल्कि उत्तर अफ्रीका जैसे अन्य इलाकों से आए नागरिकों को भी अपने में शामिल करता है। संस्कृति और भाषा इसकी राष्ट्रीय पहचान की महत्त्वपूर्ण विशेषताएँ हैं और सभी नागरिकों से अपेक्षा की जाती है कि वे अपने जीवन के सार्वजनिक पहलुओं में इस फ्रांसीसी भाषा-संस्कृति से आत्मसात हो जाएँ। हाँ, वे अपने निजी जीवन में अपनी व्यक्तिगत आस्थाओं और रिवाज़ों को बनाए रख सकते हैं। यह एक समुचित नीति लग सकती है लेकिन यह परिभाषित करना हमेशा आसान नहीं होता कि क्या सार्वजनिक है और क्या निजी? और, इसने कुछ विवादों को जन्म दिया है। धार्मिक विश्वास नागरिकों के निजी क्षेत्र का मामला माना

आओ कुछ करके सीखे

अपने घर, विद्यालय या आसपास कार्यरत तीन कामगार परिवारों का सर्वेक्षण करें। वे कहाँ रहते हैं? आवास में कितने लोग रहते हैं? उन्हें किस तरह की सुविधाएँ उपलब्ध हैं? क्या उनके बच्चे विद्यालय जाते हैं?

स्ट्रीट वेंडर्स एक्ट/पथ विक्रेता (जीविका संरक्षण और पथ विक्रय) विनियमन अधिनियम, 2014 के बारे में पता करें।

चिंतन-मंथन

जिंवाब्वे में भूमि वितरण के बारे में प्रकाशित सरकारी आँकड़ों के अनुसार वहाँ लगभग 4400 गोरे परिवारों के पास लगभग एक करोड़ हेक्टेयर भूमि है। यह देश की कुल कृषि योग्य भूमि का 32 प्रतिशत हिस्सा है।

लगभग दस लाख काले किसानों के पास केवल 1.6 करोड़ हेक्टेयर भूमि है जो कुल का 38 प्रतिशत भाग है। गोरे लोगों के पास जो जमीन है वह सिंचित और उपजाऊ है, जबकि काले लोगों के पास कम उपजाऊ और असिंचित जमीन है। भू- स्वामियों के इतिहास को खोजने से साफ पता चलता है, कि लगभग सौ वर्ष पूर्व गोरे लोगों ने उपजाऊ जमीन स्थानीय निवासियों से अपने कब्जे में ले ली। गोरे लोग जिंवाब्वे में पीढ़ियों से रह रहे हैं और अब स्वयं को जिंवाब्वे वासी समझते हैं। जिंवाब्वे में गोरों की आबादी कुल जनसंख्या की केवल 0.06 प्रतिशत है। 1997 में जिंवाब्वे के राष्ट्रपति राबर्ट मुगाबे ने 1500 बड़े फार्मों पर कब्जा करने की योजना की घोषणा की।

जिंवाब्वे के काले और गोरे नागरिकों के अपने-अपने दावों का समर्थन या विरोध करने के लिए आप नागरिकता के कौन-कौन से विचारों का उपयोग करेंगे।

जाता है लेकिन कई बार धार्मिक प्रतीक और रिवाज़ सार्वजनिक जीवन में प्रवेश कर जाते हैं। फ्रांस के सिक्ख छात्रों का स्कूलों में पगड़ी पहनने और मुस्लिम लड़कियों की स्कूली वर्दी के साथ सिर पर दुपट्टा डालने की माँग के बारे में आपने सुना होगा। इसे कुछ स्कूलों ने इस आधार पर अमान्य कर दिया था कि यह सरकारी शिक्षा के सार्वजनिक क्षेत्र में धार्मिक प्रतीकों को लाने का मामला है। जिनके धर्म इस तरह के रिवाज़ों की माँग नहीं करते हैं, उनको निस्संदेह ऐसी समस्या का सामना नहीं करना पड़ता। साफ तौर पर राष्ट्रीय संस्कृति में शामिल होना कुछ समूहों के लिए अन्य की अपेक्षा आसान होता है।

नागरिकता के नए आवेदकों को अनुमति देने की कसौटी हर देश में भिन्न होती है। नागरिकता प्रदान करने में इजराइल या जर्मनी जैसे देशों में धर्म या जातीय मूल जैसे तत्त्वों को वरीयता दी जाती है। एक समय तुर्की मज़दूरों को जर्मनी में आने और काम करने के लिए प्रोत्साहित किया गया था। उनकी स्थायी माँग है कि जर्मनी में ही जन्मे और पले-बढ़े उनके बच्चों को अपने आप जर्मनी की नागरिकता मिल जानी चाहिए। इस पर आज भी बहस जारी है। ये प्रतिबंधों से संबंधित कुछ ऐसे उदाहरण हैं, जो समावेशी होने का दम भरने वाले लोकतांत्रिक देशों में भी लगे हो सकते हैं।

भारत स्वयं को धर्मनिरपेक्ष और लोकतांत्रिक राष्ट्र-राज्य कहता है। स्वतंत्रता आंदोलन का आधार व्यापक था और विभिन्न धर्म, क्षेत्र और संस्कृति के लोगों को आपस में जोड़ने के कृतसंकल्प प्रयास किए गए। यह सही है कि जब मुस्लिम लीग से विवाद नहीं सुलझाया जा सका, तब 1947 में देश का विभाजन हुआ। लेकिन इसने उस राष्ट्र-राज्य के धर्मनिरपेक्ष और समावेशी चरित्र को कायम रखने के भारतीय राष्ट्रीय नेताओं के निश्चय को और मज़बूत ही किया जिसके निर्माण के लिए वे प्रतिबद्ध थे। यह निश्चय संविधान में सम्मिलित किया गया।

भारतीय संविधान ने बहुत ही विविधतापूर्ण समाज को समायोजित करने की कोशिश की। इन विविधताओं में से कुछ उल्लेखनीय हैं। इसने अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति जैसे भिन्न-भिन्न समुदायों, पूर्व में समान अधिकार से वंचित रही महिलाएँ, आधुनिक सभ्यता के साथ मामूली संपर्क रखने वाले अंदमान और निकोबार द्वीपसमूह के कुछ सुदूरवर्ती समुदायों और कई अन्य समुदायों को पूर्ण और समान नागरिकता देने का प्रयास किया। इसने देश के विभिन्न हिस्सों में प्रचलित विभिन्न भाषाओं, धर्म और रिवाज़ों की पहचान बनाये रखने का प्रयास किया। इसे लोगों को उनकी निजी आस्था, भाषा या सांस्कृतिक रिवाज़ों को छोड़ने के लिए बाध्य किये बिना सभी को समान अधिकार उपलब्ध कराना था। संविधान के ज़रिये आरंभ किया गया यह अद्वितीय प्रयोग था। दिल्ली में गणतंत्र दिवस परेड विभिन्न क्षेत्र, संस्कृति और धर्म के लोगों को सम्मिलित करने के राजसत्ता के प्रयास को प्रतिबिंबित करता है।

नागरिकता से संबंधित प्रावधानों का उल्लेख संविधान के दूसरे भाग और संसद द्वारा बाद में पारित कानूनों में हुआ है। संविधान ने नागरिकता की लोकतांत्रिक और समावेशी

धारणा को अपनाया। भारत में जन्म, वंश-परंपरा, पंजीकरण, देशीकरण या किसी भू-क्षेत्र के राज क्षेत्र में शामिल होने से नागरिकता हासिल की जा सकती है। संविधान में नागरिकों के अधिकार और दायित्व दर्ज हैं। यह प्रावधान भी है कि राज्य को केवल धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग जन्मस्थान या इनमें से किसी के भी आधार पर नागरिकों के साथ भेदभाव नहीं करना चाहिए। धार्मिक और भाषाई अल्पसंख्यकों के अधिकारों को भी संरक्षित किया गया है।

आओ कुछ करके सीखे

विद्यालयों या सेना जैसी किसी अन्य सार्वजनिक संस्था के लिए साझा वर्दी पर ज़ोर देना और पगड़ी जैसे धार्मिक प्रतीकों पर प्रतिबंध लगाना उपयुक्त नहीं है?

हालाँकि इस तरह के समावेशी प्रावधानों ने भी संघर्ष और विवादों को जन्म दिया है। महिला आंदोलन, दलित आंदोलन या विकास योजनाओं से विस्थापित लोगों का संघर्ष ऐसे लोगों द्वारा चलाए जा रहे संघर्षों के कुछ नमूने हैं, जो मानते हैं कि उनकी नागरिकता को पूर्ण अधिकारों से वंचित किया जा रहा है। भारत के अनुभव से संकेत मिलते हैं कि किसी देश में लोकतांत्रिक नागरिकता एक परियोजना या लक्ष्य सिद्धि का एक आदर्श है। जैसे-जैसे समाज बदल रहे हैं, वैसे-वैसे नित नए मुद्दे उठाये जा रहे हैं और वे समूह नई माँगें पेश कर रहे हैं जिन्हें लगता है कि वे हाशिये पर ठेले जा रहे हैं। लोकतांत्रिक राज्य में इन माँगों पर खुले दिमाग से बातचीत करनी होती है।

6.5 सार्वभौमिक नागरिकता

जब हम शरणार्थियों या अवैध आप्रवासियों के बारे में सोचते हैं तो मन में अनेक छवियाँ उभरती हैं। उसमें एशिया या अफ्रीका के ऐसे लोगों की छवि हो सकती है जिन्होंने यूरोप या अमेरिका में चोरी-छिपे घुसने के लिए दलाल को पैसे का भुगतान किया हो। इसमें जोखिम बहुत है लेकिन वे प्रयास में तत्पर दिखते हैं। एक अन्य छवि युद्ध या अकाल से विस्थापित लोगों की हो सकती है। इस तरह की छवियाँ अक्सर टेलीविजन पर दिखाई जाती हैं। सूडान के डरफर क्षेत्र के शरणार्थी, फिलीस्तीनी, बर्मी या बंगलादेशी शरणार्थी जैसे कई उदाहरण हैं। ये सभी ऐसे लोग हैं जो अपने ही देश या पड़ोसी देश में शरणार्थी बनने के लिए मज़बूर किये गये हैं।

हम अक्सर मान लेते हैं कि किसी देश की पूर्ण सदस्यता उन सबको उपलब्ध होनी चाहिए, जो सामान्यतया उस देश में रहते और काम करते हैं या जो नागरिकता के लिए आवेदन करते हैं। यूँ अनेक देश वैश्विक और समावेशी नागरिकता का समर्थन करते हैं लेकिन नागरिकता देने की शर्तें भी निर्धारित करते हैं। ये शर्तें आमतौर पर देश के संविधान और कानूनों में लिखी होती है। अवांछित आगंतुकों को नागरिकता से बाहर रखने के लिए राज्यसत्ताएँ ताकत का प्रयोग करती हैं।

हालाँकि प्रतिबंध, दीवार और बाड़ लगाने के बावजूद आज भी दुनिया में बड़े पैमाने पर लोगों का देशांतरण होता है। युद्ध, उत्पीड़न, अकाल या अन्य कारणों से लोग विस्थापित होते हैं। अगर कोई देश उन्हें स्वीकार करने के लिए राज़ी नहीं होता और वे घर नहीं लौट सकते तो वे राज्यविहीन या शरणार्थी हो जाते हैं। वे शिविरों में या अवैध प्रवासी के रूप में रहने के लिए मज़बूर किए जाते हैं। अक्सर वे कानूनी तौर पर काम नहीं कर सकते या अपने बच्चों को पढ़ा-लिखा नहीं सकते या संपत्ति अर्जित नहीं कर सकते। समस्या इतनी विकराल है कि संयुक्त राष्ट्र ने शरणार्थियों की जाँच करने और मदद करने के लिए उच्चायुक्त नियुक्त किया हुआ है।

नागरिक के रूप में कितने लोगों को अंगीकार किया जा सकता है, इस सवाल पर फ़ैसला करना अनेक देशों के लिए कठिन मानवीय और राजनीतिक समस्या बनी हुई है। अनेक देशों में युद्ध या उत्पीड़न से पलायन करने वाले लोगों को अंगीकार करने की नीति है। लेकिन वे भी लोगों की अनियंत्रित भीड़ को स्वीकर करना या सुरक्षा के संदर्भ में देश को जोखिम में डालना नहीं चाहेंगे। भारत उत्पीड़ित लोगों को आश्रय उपलब्ध कराने पर गर्व करता है। ऐसा भारत ने 1959 में दलाई लामा और उनके अनुयायियों के लिए किया। भारतीय राष्ट्र की सभी सीमाओं से पड़ोसी देशों के लोगों का प्रवेश हुआ है और यह प्रक्रिया ज़ारी है। इनमें से अनेक लोग वर्षों या पीढ़ियों तक राज्यहीन व्यक्तियों के रूप में पड़े रहते हैं - शिविरों में या अवैध प्रवासी के रूप में। अंततः इनमें से अपेक्षाकृत कुछ को ही नागरिकता प्राप्त होती है। ऐसी समस्याएँ लोकतांत्रिक नागरिकता के उस वायदे को चुनौती देती है, जो यह कहता है कि समकालीन विश्व में सभी लोगों को नागरिक की पहचान और अधिकार उपलब्ध होने चाहिए। अनेक लोग अपनी पसंद के देश की नागरिकता हासिल नहीं कर सकते, उनके लिए अपनी पहचान का विकल्प भी नहीं होता।

राज्यहीन लोगों का सवाल आज विश्व के लिए गंभीर समस्या बन गया है। राष्ट्रों की सीमाएँ अभी भी युद्ध या राजनीतिक विवादों के ज़रिये पुनर्परिभाषित की जा रही हैं और ऐसे विवादों से घिरे लोगों के लिए इनके परिणाम घातक होते हैं। वे अपने घर, राजनीतिक पहचान और सुरक्षा गँवाते हैं और देशांतरण के लिए मज़बूर किए जाते हैं। क्या नागरिकता ऐसे लोगों की समस्याओं का समाधान बन सकती है? अगर नहीं तो उन्हें आज किस तरह की वैकल्पिक पहचान दी जा सकती है? क्या हमें राष्ट्रीय नागरिकता से अधिक सच्ची विश्वजनीन पहचान को परखना और विकसित करना चाहिए? कभी-कभी विश्व नागरिकता की धारणा के लिए सुझाव पेश किये जाते हैं। इससे जुड़ी संभावनाओं पर अगले खंड में चर्चा की जाएगी।

6.6 विश्व नागरिकता

निम्नलिखित उक्तियों पर गौर करें-

☐ *2004 में दक्षिण एशिया के कई देशों पर कहर बरपाने वाली सुनामी से पीड़ित लोगों*

के लिए सहानुभूति और सहायता के भावोद्गार फूट पड़े।

- *आज अंतर्राष्ट्रीय तंत्र का ताना-बाना आतंकवादियों को जोड़ने में मदद करते हैं।*
- *विभिन्न देशों में बर्ड फ्लू के प्रसार और इन्सानों में विषाणुजनित महामारी के संभावित उभार को रोकने के लिए संयुक्त राष्ट्र सक्रिय है।*

इन उक्तियों में क्या साझा है? वे उस दुनिया के बारे में क्या बताती हैं, जिसमें हम रहते हैं?

हम आज एक ऐसे विश्व में रहते हैं जो आपस में जुड़ा हुआ है। संचार के इंटरनेट, टेलीविजन और सेलफोन जैसे नए साधनों ने उन तरीकों में भारी बदलाव कर दिया है, जिनसे हम अपने विश्व को समझते हैं। पहले विश्व के एक हिस्से की गतिविधियों की खबर अन्य हिस्सों तक पहुँचने में महीनों लग जाते थे। लेकिन संचार के नए तरीकों ने विश्व के विभिन्न हिस्सों की हलचलों को हमारे तत्काल संपर्क के दायरे में ला दिया है। हम अपने टेलीविजन के पर्दे पर विनाश और युद्धों को होते देख सकते हैं, इससे विश्व के विभिन्न देशों के लोगों में साझे सरोकार और सहानुभूति विकसित होने में मदद मिली है।

आओ कुछ करके सीखे

भारत में अभी रह रहे कुछ राज्यहीन लोगों की सूची बनाओ। उनमें से किसी पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखो।

विश्व नागरिकता के समर्थक दलील देते हैं कि चाहे विश्व-कुटंब और वैश्विक समाज अभी विद्यमान नहीं है, लेकिन राष्ट्रीय सीमाओं के आर-पार लोग आज एक-दूसरे से जुड़ा महसूस करते हैं। वे कहेंगे कि एशिया की सुनामी या अन्य बड़ी दैवी आपदाओं के पीड़ितों की सहायता के लिए विश्व के सभी हिस्सों से उमड़ा भावोद्गार विश्व-समाज की उभार का संकेत है। वे मानते हैं कि हमें इस भावना को मज़बूत करना चाहिए और एक विश्व नागरिकता की अवधारणा की दिशा में सक्रिय होना चाहिए।

राष्ट्रीय नागरिकता की अवधारणा यह मानती है कि हमारी राज्यसत्ता हमें वह सुरक्षा और अधिकार दे सकती है जिनकी हमें आज विश्व में गरिमा के साथ जीने के लिए ज़रूरत है। लेकिन राजसत्ताओं के समक्ष आज ऐसी अनेक समस्याएँ हैं, जिनका मुकाबला वे अपने बल पर नहीं कर सकतीं। क्या इस परिस्थिति में राज्यसत्ता द्वारा दिए गए व्यक्तिगत अधिकार लोगों की स्वतंत्रता की सुरक्षा करने के लिए पर्याप्त हैं या क्या मानव अधिकार और विश्व नागरिकता की अवधारणा की ओर बढ़ने का समय आ गया है?

विश्व नागरिकता की धारणा के आकर्षणों में से एक यह है कि इससे राष्ट्रीय सीमाओं के दोनों ओर की उन समस्याओं का मुकाबला करना आसान हो सकता है जिसमें कई देशों की सरकारों और लोगों की संयुक्त कार्रवाई ज़रूरी होती है। उदाहरण के लिए इससे प्रवासी और राज्यहीन लोगों की समस्या का सर्वमान्य समाधान पाना आसान हो सकता है या कम

नागरिकता

से कम उनके बुनियादी अधिकार और सुरक्षा सुनिश्चित की जा सकती है चाहे वे जिस किसी देश में रहते हों।

पिछले खंड में हमने देखा कि एक देश के भीतर की समान नागरिकता को सामाजिक-आर्थिक असमानता या अन्य मौजूदा समस्याओं से खतरा हो सकता है। इन समस्याओं का सामाधान अंततः सिर्फ संबंधित समाज की सरकार और जनता ही कर सकती है। इसलिए लोगों के लिए आज एक राज्य की पूर्ण और समान सदस्यता महत्त्वपूर्ण है। लेकिन विश्व नागरिकता की अवधारणा हमें याद दिलाती है कि राष्ट्रीय नागरिकता को इस समझदारी से जोड़ने की ज़रूरत है कि हम आज अंतर्संबद्ध विश्व में रहते हैं और हमारे लिए यह भी ज़रूरी है कि हम विश्व के विभिन्न हिस्सों के लोगों के साथ अपने रिश्ते मज़बूत करें और राष्ट्रीय सीमाओं के पार के लोगों और सरकारों के साथ काम करने के लिए तैयार हों।

आओ कुछ करके सीखें

https://en.unesco.org/themes/gced और https://www.gcedclearinghouse.org से विश्व नागरिकता शिक्षा (Global Citizenship Education — GCED) के बारे में पता करें।

प्रश्नावली

1. राजनीतिक समुदाय की पूर्ण और समान सदस्यता के रूप में नागरिकता में अधिकार और दायित्व दोनो शामिल हैं। समकालीन लोकतांत्रिक राज्यों में नागरिक किन अधिकारों के उपभोग की अपेक्षा कर सकते हैं? नागरिकों के राज्य और अन्य नागरिकों के प्रति क्या दायित्व हैं?

2. सभी नागरिकों को समान अधिकार दिए तो जा सकते हैं लेकिन हो सकता है कि वे इन अधिकारों का प्रयोग समानता से न कर सकें। इस कथन की व्याख्या कीजिए।

3. भारत में नागरिक अधिकारों के लिए हाल के वर्षों में किए गए किन्हीं दो संघर्षों पर टिप्पणी लिखिए। इन संघर्षों में किन अधिकारों की माँग की गई थी?

4. शरणार्थियों की समस्याएँ क्या हैं? वैश्विक नागरिकता की अवधारणा किस प्रकार उनकी सहायता कर सकती है?

5. देश के अंदर एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में लोगों के आप्रवासन का आमतौर पर स्थानीय लोग विरोध करते हैं। प्रवासी लोग स्थानीय अर्थव्यवस्था में क्या योगदान दे सकते हैं?

6. भारत जैसे समान नागरिकता देने वाले देशों में भी लोकतांत्रिक नागरिकता एक पूर्ण स्थापित तथ्य नहीं वरन एक परियोजना है। नागरिकता से जुड़े उन मुद्दों की चर्चा कीजिए जो आजकल भारत में उठाए जा रहे हैं?